सच्चिदानन्द

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,
पूर्व कुलपति, सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

सत्, चित् और आनन्द सच्चिदानन्द है। सत् का अर्थ है अविनाशी, जिसका अस्तित्व त्रैकालिक है वह सत् है। चित का अर्थ है चेतना। चेतना आत्मा में रहती है। आत्मा के अतिरिक्त सभी वस्तुएं जड़ हैं। आत्मा सत् चित्त और आनन्द स्वरूप है। इसीलिए आत्मा का सच्चिदानन्द कहा जाता है। सभी दर्शनों में आत्मा का चिंतन मुख्य रूप से प्राप्त होता है। आत्मा का कोई रूप नहीं है कोई रंग नहीं है। आत्मा तो पवित्र सच्चिदानंद स्वरूप है। दार्शनिकों ने भिन्न–भिन्न दृष्टिकोण से आत्मा पर चिंतन किया है। पवित्र आत्मा में अहिंसा, सत्य, करुणा, दया की भावना जाग्रत रहती है। इसी से आत्मा की पवित्रता का ज्ञान होता है। ऐसा भाव किसी भी कोने से राग भाव नहीं हो सकता। राग भाव तो आत्मा का एक विकार भाव है, जो त्याज्य है। करुणा भाव तो किसी की पीड़ा के साथ सहानुभूति में जगने वाला आत्मा का एक दिव्य स्वभाव है। यह कदापि हेय नहीं हो सकता।

भगवान महावीर ने अपने प्रतिद्वंद्वी गोशालक को तेजोलेश्या की आग से जलते हुए को बचा दिया था। यह विशुद्ध करुणा भाव था। करुणा भाव ही वास्तव में वह भूमिका है, जिस पर सम्यक्त्व, व्रतीत्व, तीर्थंकरत्व, ईश्वरत्व आदि सभी परमार्थ न केवल पैदा होते हैं, अपितु फलते–फूलते हैं। सभी आस्तिक दर्शन किसी न किसी रूप में आत्मा के अस्तित्त्व में विश्वास करते हैं, क्योंकि आत्मा के अस्तित्त्व को माने बिना कर्म और पुनर्जन्म की व्याख्या ही नहीं की जा सकती। आत्मा ही एक ऐसा शाश्वत तत्त्व है जिसके आधार पर मानव अपने अस्तित्त्व को सिद्ध करता है। मनुष्य जन्म के सिवा और जितनी योनियां हैं, सभी केवल कर्मों का फल भोगने के लिये ही मिलती हैं।

मानव जीवन का परम लक्ष्य आत्मामृत की प्राप्ति ही है। वह आत्मा दो प्रकार की है, एक जीवात्मा दूसरी परमात्मा। परमात्मा या ईश्वर सर्वज्ञ है, और एक है। जीवात्मा प्रत्येक शरीर में भिन्न–भिन्न व्यापक और नित्य है। आत्मा नित्य शुद्ध–बुद्ध मुक्त है। वह सच्चिदानन्द बताया

गया है। अपराविद्या वेद, व्याकरण, निरुक्त, छंद, ज्योतिष आदि शास्त्रों का ज्ञान है और परा विद्या केवल अक्षरब्रह्म का ज्ञान है। जीवात्मा वास्तव में न स्त्री है, न पुरुष है और न नपुंसक ही है। यह जब जिस शरीर को ग्रहण करता है, उस समय उससे संयुक्त होकर वैसा ही बन जाता है। जो जीवात्मा आज स्त्री है, वही दूसरे जन्म में पुरुष हो सकता है, जो पुरुष है, वही स्त्री हो सकता है। भाव यह है कि स्त्री, पुरुष और नपुंसक आदि भेद शरीर को लेकर हैं, जीवात्मा को लेकर नहीं। जीवात्मा सर्वभेदशून्य और सारी उपाधियों से रहित है। मानव का यह स्वभाव है कि दूसरों के छोटे से अवगुणों को देख लेता है किन्तु पहाड़ के समान बड़े अपने अवगुणों को नहीं देख पाता। इसका मुख्य कारण यह है कि मानव दूसरों के अवगुणों को देखने का आदि हो गया है। आत्म सुधार के लिए स्वयं के दोषों को देखना बहुत आवश्यक है। जब तक मनुष्य अपने दोषों को सुधारेगा नहीं तब तक उसका अन्तःकरण शुद्ध नहीं हो सकता। सिद्ध बुद्ध मुक्त होने के लिए स्वयं के दोषों को देखना आवश्यक है।

मनुष्य को दूसरों के दोषों को देखकर अपने भावों को नहीं बिगाड़ना चाहिए। भाव बिगाड़ने से बन्धन होता है। भाव रूपी बीज के बपन होने से नकारात्मकता आती है। जो व्यक्ति शरीर और आत्मा को भिन्न–भिन्न देखता है वह आत्मदर्शी होता है। आत्मा केवल ज्ञान स्वरूप है। आत्मा का स्वरूप सच्चिदानन्द है। जब कर्म रज आत्मा के साथ जुड़ जाते हैं तो आत्मा का स्वाभाविक गुण प्रकट नहीं हो पाता। इसे दूर करने के लिए आत्मा के स्वाभाविक स्वरूप का ज्ञान आवश्यक है।

कबीरदासजी महाज्ञानी थे। उन्हें आत्मस्वरूप का ज्ञान था। वे कहते थे– हम न मरब मरिहै संसारा अर्थात् आत्मा अजर अमर है। आत्मा कभी नहीं मरती। आत्मा को जो नहीं जानता जो अज्ञान में जीता है उसी की ही मृत्यु होती है। शरीर मरता है आत्मा नहीं। दूसरों के दोषों को नहीं देखना चाहिए। दूसरों का दोष देखने से आत्मा मलीन होती है। जब मैं दूसरे के दोषों को घर से निकला तो मैंने यही पाया कि इस संसार में मुझसे बुरा कोई नहीं है। मनुष्य जिस चश्में से देखता है, चश्में के रंग के अनुकूल ही दुनिया उसे दिखाई देती है। वस्तु का पारमार्थिक स्वरूप कभी–कभी प्रत्यक्ष से भिन्न होता हे। इसलिए ज्ञान रूपी नेत्रों से देखना बहुत आवश्यक है। मनुष्य को अपने अन्दर विद्यमान शुद्ध आत्मा का दर्शन करना चाहिए। दोष

होना मनुष्य का स्वाभाविक गुण है। यदि मनुष्य में दोष न रहे तो वह भगवान बन जाये। इसलिए मानव को अपने दोषों का ज्ञान होना चाहिए और उसे दूर करने का प्रयास करना चाहिए।

आत्मा का स्वरूप सूर्य के समान प्रकाशी है। जैसे सूर्य को जब बादल ढ़क लेता है तो सूर्य का प्रकाश अवरुद्ध हो जाता है, वैसे ही कर्मों के आवरण के कारण आत्मा का प्रकाश भी अवरुद्ध हो जाता है। बिना कर्मों के आवरण को दूर किये सच्चिदानन्द स्वरूप आत्मा का प्रकाश प्रकाशित नहीं होता। आत्मा सबमें एक समान है। एक चींटी के शरीर में भी वही आत्मा है जो एक हाथी के शरीर में है। आत्मा में कोई अन्तर नहीं है। अन्तर है केवल कर्मों का। परमात्मा ईश्वर या ब्रह्म है। वह सच्चिदानन्द स्वरूप है।